2 आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

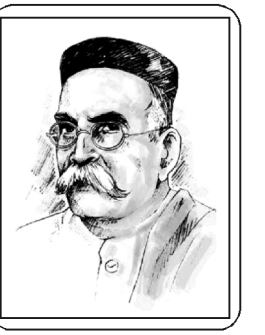

हिन्दी गद्य साहित्य के युग-विधायक महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म 5 मई, सन् 1864 ई० में रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव में हुआ था। कहा जाता है कि इनके पिता रामसहाय द्विवेदी को महावीर का इष्ट था, इसीलिए इन्होंने पुत्र का नाम महावीरसहाय रखा। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। पाठशाला के प्रधानाध्यापक ने भूलवश इनका नाम महावीरप्रसाद लिख दिया था। यह भूल हिन्दी साहित्य में स्थायी बन गयी। तेरह वर्ष की अवस्था में अंग्रेजी पढ़ने के लिए इन्होंने रायबरेली के जिला स्कूल में प्रवेश लिया। यहाँ संस्कृत के अभाव में इनको वैकल्पिक विषय फारसी लेना पड़ा। यहाँ एक वर्ष व्यतीत करने के बाद कुछ दिनों तक उन्नाव जिले के रंजीत पुरवा स्कूल में और कुछ दिनों तक फतेहपुर में पढ़ने के पश्चात् ये पिता के पास बम्बई (मुम्बई) चले गये। वहाँ इन्होंने संस्कृत, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी का अभ्यास किया। इनकी उत्कट ज्ञान-पिपासा कभी तृप्त न हुई, किन्तु जीविका के लिए इन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। रेलवे में विभिन्न पदों पर कार्य करने के बाद झाँसी में डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट के कार्यालय में मुख्य लिपिक हो गये। पाँच वर्ष बाद उच्चाधिकारी से खिन्न होकर इन्होंने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इनकी साहित्य साधना का क्रम सरकारी नौकरी के नीरस वातावरण में भी चल रहा था और इस अवधि में इनके संस्कृत ग्रन्थों के कई अनुवाद और कुछ आलोचनाएँ प्रकाश में आ चुकी थीं। सन् 1903 ई० में द्विवेदीजी ने 'सरस्वती' पत्रिका का सम्पादन स्वीकार किया। 1920 ई० तक यह गुरुतर दायित्व इन्होंने निष्ठापूर्वक निभाया। 'सरस्वती' से अलग होने पर इनके जीवन के अन्तिम अठारह वर्ष गाँव के नीरस वातावरण में बड़ी कठिनाई से व्यतीत हुए। 21 दिसम्बर सन् 1938 ई० को रायबरेली में हिन्दी के इस यशस्वी साहित्यकार का स्वर्गवास हो गया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—5 मई, सन् 1864 ई०।
- **जन्म-स्थान**—दौलतपुर (रायबरेली), उ० प्र०।
- **पिता**—रामसहाय द्विवेदी।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—घर पर संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, बांग्ला भाषाओं का स्वाध्याय।
- **लेखन विधा**—निबन्ध, नाटक, काव्य।
- **भाषा**—अत्यन्त प्रभावशाली, संस्कृतमयी और साहित्यिक हिन्दी।
- **शैली**—विविध शैलियों का प्रयोग, प्रमुख रूप से भावात्मक और विचारात्मक शैली का उपयोग।
- **प्रमुख रचनाएँ**—हिन्दी-नवरत्न, मेघदूत, शिक्षा, सरस्वती, कुमारसंभव, रघुवंश, हिन्दी महाभारत आदि।
- **उपाधि**—काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से इन्हें सम्मानित किया।
- **सम्पादन**—'सरस्वती' पत्रिका।
- **मृत्यु**—21 दिसम्बर, सन् 1938 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—द्विवेदी युग के प्रवर्तक तथा समालोचना के सूत्रधार।

हिन्दी साहित्य में द्विवेदीजी का मूल्यांकन तत्कालीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में किया जा सकता है। वह समय हिन्दी के कलात्मक विकास का नहीं, हिन्दी के अभावों की पूर्ति का था। द्विवेदी जी ने ज्ञान के विविध क्षेत्रों, इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, पुरातत्त्व, चिकित्सा, राजनीति, जीवनी आदि से सामग्री लेकर हिन्दी के अभावों की पूर्ति की। हिन्दी गद्य को माँजने-सँवारने और परिष्कृत करने में आजीवन संलग्न रहे। इन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'साहित्य वाचस्पति' एवं नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से सम्मानित किया था। उस समय टीका-टिप्पणी करके सही मार्ग का निर्देशन देनेवाला कोई न था। इन्होंने इस अभाव को दूर किया तथा भाषा के स्वरूप-संगठन, वाक्य-विन्यास, विराम-चिह्नों के प्रयोग तथा व्याकरण की शुद्धता पर विशेष बल दिया। लेखकों की अशुद्धियों को रेखांकित किया। स्वयं लिखकर तथा दूसरों से लिखवाकर इन्होंने हिन्दी गद्य को पुष्ट और परिमार्जित किया। हिन्दी गद्य के विकास में इनका ऐतिहासिक महत्त्व है।

द्विवेदीजी ने 50 से अधिक ग्रन्थों तथा सैकड़ों निबन्धों की रचना की थी। ये उच्चकोटि के अनुवादक भी थे। इन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में अनुवाद किया है। द्विवेदी जी की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं–

निबन्ध–इनके सर्वाधिक निबन्ध 'सरस्वती' में तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं एवं निबन्ध संग्रहों के रूप में प्रकाशित हुए हैं।

काव्य संग्रह–'काव्य-मंजूषा'।

आलोचना–'हिन्दी नवरत्न', 'नाट्यशास्त्र', 'रसज्ञ-रंजन', 'साहित्य-सीकर', 'विचार-विमर्श', 'वाग्विलास', 'साहित्य-संदर्भ', 'कालिदास और उनकी कविता', 'कालिदास की निरंकुशता' आदि।

अनूदित–'हिन्दी महाभारत', 'किरातार्जुनीय', 'रघुवंश', 'विनय-विनोद', 'गंगा लहरी', 'कुमारसंभव', 'विचार-रत्नावली', 'स्वाधीनता', 'शिक्षा', 'बेकन-विचारमाला', 'मेघदूत' आदि।

संपादन–'सरस्वती' मासिक पत्रिका।

अन्य रचनाएँ–'अद्‌भुत आलाप', 'संकलन', 'हिन्दी भाषा की उत्पत्ति', 'अतीत-स्मृति' आदि।

विविध रचनाएँ–'जल-चिकित्सा', 'सम्पत्तिशास्त्र', 'वक्तृत्व-कला' आदि।

द्विवेदीजी की भाषा अत्यन्त परिष्कृत, परिमार्जित एवं व्याकरण-सम्मत है। उसमें पर्याप्त गति तथा प्रवाह है। इन्होंने हिन्दी के शब्द-भण्डार की श्रीवृद्धि में अप्रतिम सहयोग दिया। इनकी भाषा में कहावतों, मुहावरों, सूक्तियों आदि का प्रयोग भी मिलता है। इन्होंने अपने निबंधों में परिचयात्मक शैली, आलोचनात्मक शैली, गवेषणात्मक शैली तथा आत्म-कथात्मक शैली का प्रयोग किया है। कठिन से कठिन विषय को बोधगम्य रूप में प्रस्तुत करना इनकी शैली की सबसे बड़ी विशेषता है। शब्दों के प्रयोग में इनको रूढ़िवादी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि आवश्यकतानुसार तत्सम शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का भी इन्होंने व्यवहार किया है।

'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबंध में संस्कृत के महाकवि माघ के प्रभात-वर्णन सम्बन्धी हृदयस्पर्शी स्थलों को निबंधकार ने हमारे सामने रखा है। उसने बहुत ही कलात्मक ढंग से यह दिखलाया है कि किस तरह सूर्य और चन्द्रमा, नक्षत्र एवं दिग्वधुएँ अपनी-अपनी क्रीड़ाओं में तल्लीन हैं। सूर्य की रश्मियाँ अन्धकार को नष्ट कर जीवन और जगत् को प्रकाश से परिपूर्ण कर देती हैं। रसिक चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से रजनीगंधा को प्रमुदित कर देता है। सूर्य और चन्द्रमा समय-समय पर दिग्वधुओं से कैसे प्रणय-विवेदन करते हुए एक दूसरे के प्रति प्रतिद्वन्द्विता के भाव से भर उठते हैं, कैसे प्रवासी सूर्य का स्थान चन्द्रमा लेकर दिग्वधुओं से हास-परिहास करते हुए सूर्य के कोप का भाजन बन उसके द्वारा परास्त किया जाता है—इन सबका बड़ा मनोहारी चित्रण इस निबंध में किया गया है।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी-साहित्य के युगप्रवर्तक साहित्यकारों में शामिल हैं। इन्हें शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली का वास्तविक सर्जक माना जाता है। इसीलिए 1900 ई॰ से 1922 ई॰ तक के समय को हिन्दी-साहित्य के इतिहास में 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है।

●●●

महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

रात अब बहुत ही थोड़ी रह गयी है। सुबह होने में कुछ ही कसर है। जरा सप्तर्षि नाम के तारों को तो देखिए। वे आसमान में लंबे पड़े हुए हैं। उनका पिछला भाग तो नीचे को झुका-सा है और अगला ऊपर को। वहीं, उनके अधोभाग में, छोटा-सा ध्रुवतारा कुछ-कुछ चमक रहा है। सप्तर्षियों का आकार गाड़ी के सदृश है—ऐसी गाड़ी के सदृश जिसका जुवाँ ऊपर को उठ गया हो; इसी से उनके और ध्रुवतारा के दृश्य को देखकर श्रीकृष्ण के बालपन की एक घटना याद आ जाती है। शिशु श्रीकृष्ण को मारने के लिए एक बार गाड़ी का रूप बनाकर शकटासुर नाम का एक दानव उनके पास आया। श्रीकृष्ण ने पालने में पड़े-ही-पड़े, खेलते-खेलते, उसे एक लात मार दी। उसके आघात से उसका अग्रभाग ऊपर को उठ गया और पश्चाद्भाग खड़ा ही रह गया। श्रीकृष्ण उसके तले आ गये। वही दृश्य इस समय सप्तर्षियों की अवस्थिति का है। वे तो कुछ उठे हुए-से लंबे पड़े हैं, छोटा-सा ध्रुव उनके नीचे चमक रहा है।

पूर्व-दिशारूपिणी स्त्री की प्रभा इस समय बहुत ही भली मालूम होती है। वह हँस-सी रही है। वह यह सोचती-सी है कि इस चन्द्रमा ने जब तक मेरा साथ दिया—जब तक यह मेरी संगति में रहा—तब तक उदित ही नहीं रहा, इसकी दीप्ति भी खूब बढ़ी, परन्तु, देखो, वही अब पश्चिम-दिशारूपिणी स्त्री की तरफ जाते ही (हीन-दीप्ति होकर) पतित हो रहा है। इसी से पूर्व दिशा, चन्द्रमा को देख-देख प्रभा के बहाने, ईर्ष्या से मुसका-सी रही है। परन्तु चन्द्रमा को उसके हँसी-मजाक की कुछ भी परवाह नहीं। वह अपने ही रंग में मस्त मालूम होता है। अस्त समय होने के कारण उसका बिंब तो लाल है, पर किरणें उसकी पुराने कमल की नाल के कटे हुए टुकड़ों के समान सफेद हैं। स्वयं सफेद होकर भी, बिंब की अरुणता के कारण, वे कुछ-कुछ लाल भी हैं। कुंकुम-मिश्रित सफेद चन्दन के सदृश उन्हीं लालिमा मिली हुई सफेद किरणों से चन्द्रमा पश्चिम दिग्वधू का शृंगार-सा कर रहा है—उसे प्रसन्न करने के लिए उसके मुख पर चन्दन का लेप-सा समा रहा है। पूर्व दिग्वधू के द्वारा किये गये उपहास की तरफ उसका ध्यान ही नहीं।

जब कमल शोभित होते हैं, तब कुमुद नहीं और जब कुमुद शोभित होते हैं तब कमल नहीं। दोनों की दशा बहुधा एक-सी नहीं रहती। परन्तु, इस समय, प्रातःकाल, दोनों में तुल्यता देखी जाती है। कुमुद बन्द होने को हैं; पर अभी पूरे बंद नहीं हुए। उधर कमल खिलने को हैं; पर अभी पूरे खिले नहीं। एक की शोभा आधी ही रह गयी है और दूसरे को आधी ही प्राप्त हुई है। रहे भ्रमर, सो अभी दोनों ही पर मँडरा रहे हैं और गुंजा-रव के बहाने दोनों ही के प्रशंसा के गीत-से गा रहे हैं। इसी से इस समय कुमुद और कमल, दोनों ही समता को प्राप्त हो रहे हैं।

सायंकाल जिस समय चन्द्रमा का उदय हुआ था, उस समय वह बहुत ही लावण्यमय था। क्रम-क्रम से उसकी दीप्ति, उसकी सुन्दरता—और भी बढ़ गयी। वह ठहरा रसिक। उसने सोचा, यह इतनी बड़ी रात यों ही कैसे कटेगी; लाओ खिली हुई नवीन कुमुदियों (कोकाबेलियों) के साथ हँसी-मजाक ही करें। अतएव वह उनकी शोभा के साथ हास-परिहास करके उनका विकास करने लगा। इस तरह खेलते-कूदते सारी रात बीत गयी। वह थक भी गया; शरीर पीला पड़ गया, कर (किरण-जाल) स्रस्त अर्थात् शिथिल हो गये। इससे वह दूसरी दिगंगना (पश्चिम दिशा) की गोद में जा गिरा। यह शायद उसने इसलिए किया कि रात भर के जगे हैं, लाओ, अब उसकी गोद में आराम से सो जायँ।

अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न

देकर वे खुद ही उसके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली। रह गयी दिन और रात की संधि अर्थात् प्रातःकालीन संध्या। सो अरुण कमलों ही को आप इस अल्पवयस्क सुता-सदृश संध्या के लाल-लाल और अतिशय कोमल हाथ-पैर समझिए। मधुप-मालाओं से छाये हुए नील कमलों ही को काजल लगी हुई उसकी आँखें जानिए। पक्षियों के कल-कल शब्द ही को उसकी तोतली बोली अनुमान कीजिए। ऐसे संध्या ने जब देखा कि रात इस लोक से जा रही है, तब पक्षियों के कोलाहल के बहाने यह कहती हुई कि 'अम्मा, मैं भी आती हूँ', वह भी उसी के पीछे दौड़ गयी।

अंधकार गया, रात गयी, प्रातःकालीन संध्या भी गयी। विपक्षी दल के एकदम ही पैर उखड़ गये। तब, रास्ता साफ देख, वासर-विधाता भगवान् भास्कर ने निकल आने की तैयारी की। कुलिश-पाणि इन्द्र की पूर्व दिशा में, नये सोने के समान, उनकी पीली-पीली किरणों का समूह छा गया। उनके इस प्रकार आविर्भाव से एक अजीब ही दृश्य दिखायी दिया। आपने बड़वानल का नाम सुना ही होगा। वह एक प्रकार की आग है, जो समुद्र के जल को जलाया करती है। सूर्य के उस लाल-पीले किरण समूह को देखकर ऐसा मालूम होने लगा जैसे वही बड़वाग्नि समुद्र की जल-राशि को जलाकर, त्रिभुवन को भस्म कर डालने के इरादे से, समुद्र के ऊपर उठ आयी हो। धीरे-धीरे दिननाथ का बिंब क्षितिज के ऊपर आ गया। तब एक और ही प्रकार के दृश्य के दर्शन हुए। ऐसा मालूम हुआ, जैसे सूर्य का वह बिंब एक बहुत बड़ा घड़ा है और दिग्वधुएँ जोर लगाकर समुद्र के भीतर से उसे खींच रही हैं। सूर्य की किरणों ही को आप लंबी-लंबी मोटी रस्सियाँ समझिए। उन्हीं से उन्होंने बिंब को बाँध-सा दिया है और खींचते वक्त, पक्षियों के कलरव के बहाने, वे यह कह-कहकर शोर मचा रही हैं कि खींच लिया है; कुछ ही बाकी है, ऊपर आना ही चाहता है; जरा और जोर लगाना।

दिगंगनाओं के द्वारा खींच खाँचकर किसी तरह सागर की सलिल-राशि से बाहर निकाले जाने पर सूर्यबिंब चमचमाता हुआ लाल-लाल दिखायी दिया। अच्छा, बताइए तो सही, यह इस तरह का क्यों है? हमारी समझ में तो यह आता है कि सारी रात पयोनिधि के पानी के भीतर जब यह पड़ा था, तब बड़वाग्नि की ज्वाला ने इसे तपाकर खूब दहकाया होगा। तभी तो खैर (खदिर) के जले हुए कुंदे के अंगार के सदृश लालिमा लिए हुए यह इतना शुभ्र दिखायी दे रहा है। अन्यथा, आप ही कहिए, इसके इतने अंगार गौर होने का और क्या कारण हो सकता है?

सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी—पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों-पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को ही आप्यायित करते हैं।

उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी—आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर वह आकाश में आ गया।

आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो। कहिए, यह सूझ कैसी है? बहुत दूर की तो नहीं।

तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना—हटाना ही—चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने

ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों का भी विनाश करना पड़ा—उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है—शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

सूर्योदय होते ही अंधकार भयभीत होकर भागा। भागकर वह कहीं गुहाओं के भीतर और कहीं घरों के कोनों और कोठरियों के भीतर जा छिपा। मगर वहाँ भी उसका गुजारा न हुआ। सूर्य यद्यपि बहुत दूर आकाश में था, तथापि उसके प्रबल तेज-प्रताप ने छिपे हुए अंधकार को उन जगहों से भी निकाल बाहर किया। निकाला ही नहीं, अपितु उसका सर्वथा नाश भी कर दिया। बात यह है कि तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर-स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा, ये दोनों ही आकाश की दो आँखों के समान हैं। उनमें से सहस्रकिरणात्मक-मूर्तिधारी सूर्य ने ऊपर उठकर जब अशेष लोकों का अंधकार दूर कर दिया, तब वह खूब ही चमक उठा। उधर बेचारा चन्द्रमा किरण-हीन हो जाने से बहुत ही धूमिल हो गया। इस तरह आकाश की एक आँख तो खूब तेजस्क और दूसरी तेजोहीन हो गयी। अतएव ऐसा मालूम हुआ, जैसे एक आँख, प्रकाशवती और दूसरी अंधी वाला आकाश काना हो गया हो।

कुमुदिनियों का समूह शोभाहीन हो गया और सरोरुहों का समूह शोभा-सम्पन्न। उलूकों को तो शोक ने आ घेरा और चक्रवाकों को अत्यानन्द ने। इसी तरह सूर्य तो उदय हो गया और चन्द्रमा अस्त। कैसा आश्चर्यजनक विरोधी दृश्य है। दुष्ट दैव की चेष्टाओं का परिपाक कहते नहीं बनता। वह बड़ा ही विचित्र है। किसी को तो वह हँसाता है, किसी को रुलाता है।

सूर्य को आप दिग्वधुओं का पति समझ लीजिए और यह भी समझ लीजिए कि पिछली रात वह कहीं और किसी जगह, अर्थात् विदेश, चला गया था। मौका पाकर, इसी बीच उसकी जगह पर चन्द्रमा आ विराजा। पर ज्योंही सूर्य अपना प्रवास समाप्त करके सबेरे, पूर्व दिशा में फिर आ धमका, त्योंही उसे देख चन्द्रमा के होश उड़ गये। अब क्या हो? और कोई उपाय न देख, अपने किरण-समूह को कपड़े-लत्ते के सदृश छोड़ उपपति के समान गर्दन झुकाकर वह पश्चिम-दिशारूपी खिड़की के रास्ते निकल भागा।

महामहिम भगवान मधुसूदन जिस समय कल्पांत में समस्त लोकों का प्रलय, बात की बात में कर देते हैं, उस समय अपनी समधिक अनुरागवती श्री (लक्ष्मी) को धारण करके—उन्हें साथ लेकर—क्षीर-सागर में अकेले ही जा विराजते हैं। दिन चढ़ आने पर महिमामय भगवान भास्कर भी, उसी तरह एक क्षण में, सारे तारा-लोक का संहार करके, अपनी अतिशायिनी श्री (शोभा) के सहित, क्षीर-सागर ही के समान आकाश में, देखिए, अब यह अकेले ही मौज कर रहे हैं।

–आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

अभ्यास प्रश्न

➥ गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न देकर वे खुद ही उनके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक के नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भगवान सूर्यदेव का सारथि कौन है?
(iv) अंधकार का शत्रु किसे बताया गया है?
(v) अंधकार का समूल नाश किसने कर दिया?

(ख) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी–पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्यदेव के स्वभाव के विषय में लेखक के क्या विचार हैं?
(iv) पर्वतों के शिखरों पर पड़ती प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के विषय में क्या कहा गया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में सूर्यदेव की उदारता के आधार पर किसके संदर्भ में और क्या कहा गया है?

(ग) उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी– आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर में वह आकाश में आ गया।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्योदय होने के समय कमल और कमलनियों पर क्या प्रभाव पड़ा?
(iv) उदित होते समय सूर्य किस प्रकार दिखाई पड़ता है?
(v) किसे देखकर कमलनियाँ आनन्दित हुईं?

(घ) आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रातःकालीन सूर्य की किरणें पड़ने पर नदियों का जल किस प्रकार प्रतीत होने लगा?
(iv) प्रस्तुत गद्यांश में अंधकार की तुलना किससे की गई है?
(v) सूर्य की किरण-बाण ने किसे नष्ट किया?

(ङ) तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना–हटाना ही–चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों

का भी विनाश करना पड़ा– उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है– शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तारों का समूह देखने में कैसा प्रतीत होता है?
(iv) गद्यांश के अनुसार राजनीति क्या कहती है?
(v) सूर्योदय का प्रमुख प्रयोजन क्या होता है?

➥ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की जीवनी बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. महावीरप्रसाद द्विवेदी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. महावीरप्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
4. महावीरप्रसाद द्विवेदी की कृतियों का उल्लेख करते हुए उनके साहित्यिक परिचय पर प्रकाश डालिए।
5. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
6. प्रकृति के मानवीकरण की दृष्टि से 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबन्ध पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
7. 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' नामक निबंध का सार लिखिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।
   (ख) जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते।
   (ग) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है।
   (घ) तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

➥ लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "समास-बहुल, संस्कृत-शब्दावली के कारण निबंध के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होता है।" इस मत से आप कहाँ तक सहमत हैं?
2. लेखक की दृष्टि से सूर्य-बिम्ब के रक्तिम वर्ण होने का क्या कारण है?
3. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सूर्योदय का किन-किन रूपों में वर्णन किया है?
4. निम्नलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास लिखिए–
   सुता-सदृश, मधुप-मालाओं, जानु-पाणि, किरण-हीन।
5. प्रस्तुत निबंध की शैलीगत विशेषताएँ बताइए।
6. प्रस्तुत निबंध में प्रकृति का कैसा मानवीकरण किया गया है?
7. सूर्योदय के विकास-क्रम के साथ विभिन्न रसों की निष्पत्ति का वर्णन कीजिए।
8. 'महाकवि माघ का प्रभात वर्णन' नामक निबन्ध की विशेषताएँ बताइए।

●●●